नास्ति तक्रात् परं किंचिदौषधम्

डा. मीरा अन्तिवाल
रीडर
एस. ए. एस. आयुर्वेद चिकित्सालय
महाविद्यालय एवं चिकित्सालय, वाराणसी

आयुर्वेद शास्त्र में अनेक स्थानों पर तक्र का विभिन्न रोगों कीचिकित्सा में वर्णन किया है। तक्र को ग्रहणी रोग कीप्रधान चिकित्सा बता या है।

योगरत्नाकर, भावप्रकाश आदि ग्रंथों मे ग्रहणी चिकित्साधिकार में तक्र कीविशेषता बताते हुए कहा गया है-

“न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्न तक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः।

यथा सुराणाममृतं प्रधानं तथा नराणां भुवि तमाहुः।।

- भाव प्र0 मध्यम खण्ड ग्रहणी रोग 4/45

अर्थात तक्र सेवन करने वाले पुरूष कभी किसी व्याधि से पीड़ित नही होता है। यदि वह किसी व्याधि से पीड़ित भी हो जाए है तो तक्र सेवन से उस रोग का नाश हो जाता है।

जिस प्रकार देवताओं के लिए अमृत का महत्व है। उसी प्रकार मनुष्यों के लिए तक्र महत्वपू र्ण कहा गया है।

तक्र का ग्रहणी चिकित्सा में महत्वपू र्ण भू मिका व प्रभाव को देखते हुए आचार्यांने इसकीगणना अग्रय में कीहै।

  Copyright © 2020 Authors

चरकानुसार:-

"तक्राभ्यासो ग्रहणीदोषशोफार्शाेघृतव्यापतप्रशमनानां'

(च0सू0 25) (यज्जः पुरूषीय अध्याय)

अर्थात तक्र का नियमित सेवन ग्रहणीदोष शोथ, अर्शविकार व घृतजन्य व्यापद प्रशमन में श्रेष्ठ है।

इसी प्रकार का वर्णन अष्टांगसंग्रह में अ0सं0 सू0 13 में किया गया है।

अष्टाप्रदय के अनुसार- मथितं ग्रहण्याम्।

- (अ0ह0 उ0 40/50)

वागभट् ने भी मथित अर्थात जल मिलाए बिना मथे हुए दही, को ग्रहणी कीश्रेष्ठ चिकित्सा बताया है। इस श्लोक कीटीका में 'मथित तक्रम्' इस वचन द्वारा चन्द्रनन्दन ने मथित शब्द से तक्र के ग्रहण का विधान किया है।

इसी प्रकार तक्र के विभिन्न गुणों व अनेक रोगनाशक प्रभाव को देखते हुए आचार्या ने तक्र की महिमा व महत्व का अनेक प्रकार से वर्णन किया है जैसे-

अमृतं दुर्लभं नृणां, देवानाउदकं तथा।

पितृणां दुर्लभः पुत्रस्तकं शक्रस्य दुर्लभम्।

-(वैद्यकीय सुभाषित साहित्यम् 12/5)

अर्थात- जिस प्रकार मनुष्यों के लिए अमृत, देवताओं के लिए उदक, मित्रों के लिए पुत्र, दुर्लभ होता है उसी प्रकार तक्र इन्द्र के लिए भी दुर्लभ है।

Copyright ⓒ 2020 Authors

कैलासे यदि तक्रमस्ति गिरिशः किं नीलकष्ठो भवेद्।

बैकुण्ठे यदि कृष्णतामनुभवे दद्यापि किं केशवः

इन्द्रो दुर्भगतां क्षये द्विजयतिर्लम्बोदत्वं गणः।

कुष्ठित्व च कुबेरको दहनतामग्निश्च किं विन्दति।।

(वैद्यकीय सुभाषित साहित्य 12/6)

अर्थात कैलास पर्वत पर यदि तक्र होता तो शंकर नीलकण्ठ क्यों बनते? बैकुण्ठ में यदि तक्र होता तो कृष्ण काले क्यों बनते? यदि देवताओं को भी तक्र उपलब्ध होता तो इन्द्र भगयुक्त, चन्द्रक्षययुक्त, गणपति उदररोग ग्रसित, कुबेर कुष्ठ युक्त व अग्नि दाह युक्त क्यों होते?

अर्थात तक्र में विषनाशक, वण्र्यकर, अर्श-भगन्दरनाशक, क्षयनाशक, मेदोहर, कुष्ठनाशक व दाहहर आदि अनेक गुण विद्यमान है।

इसके अतिरिक्त च0चि0 अध्याय 13 (उदरचिकित्सा) व 14 (अर्शचिकित्सा) में भी तक्र के बारे में कहा गया है कि-

तक्र वातकफार्तानाममृतत्वाय कल्पते। (च0चि0 13/107)

वातश्लेष्मविकाराणां शतं चापि निवर्तते।

नास्ति तक्रात् परं किचिंदौषधं कफवातजे। (च0चि0 15/88)

अर्थात वातश्लेष्मिक विकारो में तक्र से बढ़कर कोई औषधि नही है वात कफज विकारो में तक्र अमृत के समान है।

तक्र के गुण कर्म

आचार्याने तक्र के गुणों का तथा उन गुणों का विभिन्न दोषों व रोगों पर होने वाले प्रभाव का भी वर्णन किया है। च0चि0 15 ग्रहणीदोष चिकित्सा में तक्र के विषय में आचार्य चरक ने कहा है-

 Copyright © 2020 Authors

तक्रं तु ग्रहणीदोषे दीपन ग्राहिलाघवात्।।

श्रेष्ठ मधुरपाकित्वान्न च पित्तं प्रकोपयेत्।

कषायोष्णविकासित्वा डौक्ष्याच्चैव कफे हितम्।।

वाते स्वाद्वम्ल सान्द्रत्वात् सद्यस्कमविदाहि तत्।

तस्मात् तक्र प्रयोगा ये जठराणां तथाऽर्शसाम्।

विहिता ग्रहणी दोषे सर्वशस्तान् प्रयोजयेत्। (च0चि0 15/117-121)

अ0ह0 10/(4-5), चक्रदत्त ग्रहणी चिकित्सा 10/4-5, भावप्रकाश, योगरत्नाकर आदि में भी समानार्थक पाठ है।

तक्र के गुणों एवं उसके प्रभाव का वर्णन करते हुए सर्वप्रथम ग्रहणी दोष में तक्र कीकार्मुकता का कारण बताया है। तक्र अग्निदीपक, ग्राहीगुण एवं लघुता के कारण ग्रहणी रोग कीश्रेष्ठ चिकित्सा है।

इसके पश्चात् प्रत्येक दोष पर तक्र का प्रभाव बताते हुए वर्णन किया है। यद्यपि तक्र अम्ल होता है अतः अम्ल होने से पित्तप्रकोप होना चाहिए परन्तु तक्र अपने मधुर विपाकीगुण से पित्त का प्रकोप नही करता है इस श्लोक कीटीका करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने अलग अलग मत प्रस्तुत किए है -

अरूणदत्त के अनुसार- तक्र पित्त कीअधिक मात्रा में दुष्टि नही करता परन्तु किचिंत पित्तकर होता है।

शिवदासेन के अनुसार-तक्र पित्त को प्रकुपित नही करता यह सत्य है साथ ही 'न च पित्तं प्रकोपयेत्' इस वाक्य में आए 'च' शब्द से संस्कृत भाषा के नियमानुसार अनुक्त अर्थ प्राप्त होता है कि तक्र पित्त का शमन भी नही करता। (चकारान्नापि पित्तं शमयती त्याकृतम्)

भावमिश्र ने-स्पष्ट पाठान्तर द्वारा इसे पित्त प्रकोपक कहा है उनका मू ल वचन है कि तक्र मधुर विपाकीहोता है व अन्त में पित्त प्रकुपित करता है। (अन्तेपित्तप्रकोपणम्) इसी प्रकार तक्र कषाय, उष्ण, विकासी खक्ष आदि गुणों वाला होने से कफज विकारो में भी हितकर ह। मधुर अम्ल रस सान्द्र गुणों के

 Copyright © 2020 Authors

कारण वातविकारों में हितकार है। इंन्ही गुणों के कारण तक्र प्रत्येक दोष से उत्पन्न होने ग्रहणी दोष में हितकर है।

ग्रहणी कीसम्प्राप्ति में बताया गया है कि निदान सेवन से -

दुष्यत्यग्निः स दुष्टोऽन्नं न तत् पचति लघ्वपि।

अपच्यमानं शुक्तत्वं जात्यन्ने विषरूपताम्। (च0चि015)

चू कि ग्रहणीदोष में अन्न का शुक्त(अम्ल) रूप हो जाता है, तथा अधिक समय पू र्व बनाई गयी तक्र का भी अम्ल रस हो जाता है अतः चरक ने सद्यःनिर्मित तक्र का प्रयोग बताया है जो कि अविदाहि होता है।

टीकाकारो के अनुसार सद्यःनिर्मित तक्र के दो अर्थ है-

1. दही को तत्काल मथकर उसी समय तक्र सेवन करना

2. ताजे दही से निर्मित तक्र सेवन अर्थात रात में जमाए दही का सेवन प्रातःकाल व प्रातः काल जमाए दही का सेवन संयकाल कर लेना।

चू किवातशमन में तक्र के हेतु होने में तक्र का अम्ल व मधुर रस कारण बताया गया है। यहां तक्र का अम्ल रस शिवदास सेन के अनुसार अनुरस है न कि प्रधान रस इसी कारण से तक्र पित्त का प्रकोप नहीं करता है।

इन्हीं गुणों के कारण आचार्य चरक ने अर्श व उदर रोगों में जिन- जिन तक्र प्रयोगों का वर्णन किया है। उन सभी का ग्रहणी दोष चि0 मे उपयोग करने का निर्देश किया है।

नास्ति तक्रात् परं किंचिदौषधम्

1. वाचस्पत्य

निरूक्ति-न0 तन्च-रक् न्य कुत्वम्।

चतुर्थां शजलयोगेन दधिमन्थनजातेदधिविकारभेदे (घोल) अमरः।

Copyright ⓒ 2020 Authors

शब्दकल्पद्रुम- तनक्ति संकोचयति दुग्ध पादाम्बु दधिरूपेण परिणमयतीत्यर्थः। स्कायितचीती उष्णं। 2/13

इति रक् न्यक्कड.दित्वात्कुत्वे चं यादाम्बुसंयुतदधि। इत्यमरः।

आयुर्वेद शास्त्र में अनेक स्थानों पर तक्र का विभिन्न रोगों कीचिकित्सा में वर्णन किया है। तक्र को ग्रहणी रोग कीप्रधान चिकित्सा बता या है।

योगरत्नाकर, भावप्रकाश आदि ग्रंथों मे ग्रहणी चिकित्साधिकार में तक्र कीविशेषता बताते हुए कहा गया है-

"न तक्रसेवी व्यथते कदाचिन्न तक्रदग्धाः प्रभवन्ति रोगाः।

यथा सुराणाममृतं प्रधानं तथा नराणां भुवि तमाहुः।।

भाव प्र0 मध्यम खण्ड ग्रहणी रोग 4/45

अर्थात तक्र सेवन करने वाले पुरूष कभी किसी व्याधि से पीड़ित नही होता है। यदि वह किसी व्याधि से पीड़ित भी हो जाए है तो तक्र सेवन से उस रोग का नाश हो जाता है।

जिस प्रकार देवताओं के लिए अमृत का महत्व है। उसी प्रकार मनुष्यों के लिए तक्र महत्वपू र्ण कहा गया है।

तक्र का ग्रहणी चिकित्सा में महत्वपू र्ण भू मिका व प्रभाव को देखते हुए आचार्या ने इसकीगणना अग्रय में कीहै।

चरकानुसारः-

"तक्राभ्यासो ग्रहणीदोषशोफार्शाेघृतव्यापतप्रशमनानां' (च0सू0 25)

(यज्जः पुरूषीय अध्याय)

अर्थात तक्र का नियमित सेवन ग्रहणीदोष शोथ, अर्शविकार व घृतजन्य व्यापद प्रशमन में श्रेष्ठ है।

 Copyright © 2020 Authors

इसी प्रकार का वर्णन अष्टांगसंग्रह में अ0सं0 सू0 13 में किया गया है।

अष्टाप्रदय के अनुसार- मथितं ग्रहण्याम्। (अ0हृ0 उ0 40/50)

वागभट् ने भी मथित अर्थात जल मिलाए बिना मथे हुए दही, को ग्रहणी कीश्रेष्ठ चिकित्सा बताया है।

इस श्लोक कीटीका में 'मथित तक्रम्' इस वचन द्वारा चन्द्रनन्दन ने मथित शब्द से तक्र के ग्रहण का विधान किया है।

इसी प्रकार तक्र के विभिन्न गुणों व अनेक रोगनाशक प्रभाव को देखते हुए आचार्यानें तक्र कीमहिमा व महत्व का अनेक प्रकार से वर्णन किया है जैसे-

अमृतं दुर्लभं नृणां, देवानाउदकं तथा।

पितृणां दुर्लभः पुत्रस्तकं शक्रस्य दुर्लभम्। (वैद्यकीय सुभाषित साहित्यम् 12/5)

अर्थात- जिस प्रकार मनुष्यों के लिए अमृत, देवताओं के लिए उदक, मित्रों के लिए पुत्र, दुर्लभ होता है उसी प्रकार तक्र इन्द्र के लिए भी दुर्लभ है।

कैलासे यदि तक्रमस्ति गिरिशः किं नीलकष्ठो भवेद्।

बैकुण्ठे यदि कृष्णतामनुभवे दद्यापि किं केशवः

इन्द्रो दुर्भगतां क्षये द्विजयतिर्लम्बोदत्वं गणः।

कुष्ठित्व च कुबेरको दहनतामग्निश्च किं विन्दति।।

(वैद्यकीय सुभा षित साहित्य 12/6)

अर्थात कैलास पर्वत पर यदि तक्र होता तो शंकर नीलकण्ठ क्यों बनते? बैकुण्ठ में यदि तक्र होता तो कृष्ण काले क्यों बनते? यदि देवताओं को भी तक्र उपलब्ध होता तो इन्द्र भगयुक्त, चन्द्रक्षययुक्त, गणपति उदररोग ग्रसित, कुबेर कुष्ठ युक्त व अग्नि दाह युक्त क्यों होते?

अर्थात तक्र में विषनाशक, वर्ण्यकर, अर्श-भगन्दरनाशक, क्षयनाशक, मेदोहर, कुष्ठनाशक व दाहहर आदि अनेक गुण विद्यमान है।

 Copyright © 2020 Authors

इसके अतिरिक्त च0चि0 अध्याय 13 (उदरचिकित्सा) व 14 (अर्शचिकित्सा) में भी तक्र के बारे में कहा गया है कि-

तक्र वातकफार्तानाममृतत्वाय कल्पते। (च0चि0 13/107)

वातश्लेष्मविकाराणां शतं चापि निवर्तते।

नास्ति तक्रात् परं किचिंदौषधं कफवातजे। (च0चि0 15/88)

अर्थात वातश्लेष्मिक विकारो में तक्र से बढ़कर कोई औषधि नही है वात कफज विकारो में तक्र अमृत के समान है।

तक्र के गुण कर्म

आचार्या ने तक्र के गुणों का तथा उन गुणों का विभिन्न दोषों व रोगों पर होने वाले प्रभाव का भी वर्णन किया है। च0चि0 15 ग्रहणीदोष चिकित्सा में तक्र के विषय में आचार्य चरक ने कहा है-

तक्रं तु ग्रहणीदोषे दीपन ग्राहिलाघवात्।।

श्रेष्ठ मधुरपाकित्वान्न च पित्तं प्रकोपयेत्।

कषायोष्णविकासित्वा डौक्ष्याच्चैव कफे हितम्।।

वाते स्वाद्वम्ल सान्द्रत्वात् सद्यस्कमविदाहि तत्।

तस्मात् तक्र प्रयोगा ये जठराणां तथाऽर्शसाम्।

विहिता ग्रहणी दोषे सर्वशस्तान् प्रयोजयेत्। (च0चि0 15/117-121)

अ0ह0 10/(4-5), चक्रदत्त ग्रहणी चिकित्सा 10/4-5, भावप्रकाश, योगरत्नाकर आदि में भी समानार्थक पाठ है।

तक्र के गुणों एवं उसके प्रभाव का वर्णन करते हुए सर्वप्रथम ग्रहणी दोष में तक्र कीकार्मुकता का कारण बताया है। तक्र अग्निदीपक, ग्राहीगुण एवं लघुता के कारण ग्रहणी रोग कीश्रेष्ठ चिकित्सा है।

 Copyright © 2020 Authors

इसके पश्चात् प्रत्येक दोष पर तक्र का प्रभाव बताते हुए वर्णन किया है।यद्यपि तक्र अम्ल होता है अतः अम्ल होने से पित्तप्रकोप होना चाहिए परन्तु तक्र अपने मधुर विपाकीगुण से पित्त का प्रकोप नही करता है इस श्लोक कीटीका करते हुए अनेक विद्वानों ने अपने अलग अलग मत प्रस्तुत किए है -

अरूणदत्त के अनुसार- तक्र पित्त कीअधिक मात्रा में दुष्टि नही करता परन्तु किचिंत पित्तकर होता है।

शिवदासेन के अनुसार-तक्र पित्त को प्रकुपित नही करता यह सत्य है साथ ही 'न च पित्तं प्रकोपयेत्' इस वाक्य में आए 'च' शब्द से संस्कृत भाषा के नियमानुसार अनुक्त अर्थ प्राप्त होता है कि तक्र पित्त का शमन भी नही करता। -(चकारान्नापि पित्तं शमयती त्याकृतम्)

भावमिश्र ने-स्पष्ट पाठान्तर द्वारा इसे पित्त प्रकोपक कहा है उनका मू ल वचन है कि तक्र मधुर विपाकीहोता है व अन्त में पित्त प्रकुपित करता है। (अन्तेपित्तप्रकोपणम्) इसी प्रकार तक्र कषाय, उष्ण, विकासी खक्ष आदि गुणों वाला होने से कफज विकारो में भी हितकर ह। मधुर अम्ल रस सान्द्र गुणों के कारण वातविकारों में हितकार है। इंन्ही गुणों के कारण तक्र प्रत्येक दोष से उत्पन्न होने ग्रहणी दोष में हितकर है।

ग्रहणी कीसम्प्राप्ति में बताया गया है कि निदान सेवन से -

दुष्यत्यग्निः स दुष्टोऽन्नें न तत् पचति लघ्वपि।

अपच्यमानं शुक्तत्वं जात्यन्ने विषरूपताम् । (च0चि015)

चू कि ग्रहणीदोष में अन्न का शुक्त(अम्ल) रूप हो जाता है, तथा अधिक समय पू र्व बनाई गयी तक्र का भी अम्ल रस हो जाता है अतः चरक ने सद्यःनिर्मित तक्र का प्रयोग बताया है जो कि अविदाहि होता है।

टीकाकारो के अनुसार सद्यःनिर्मित तक्र के दो अर्थ है-

1. दही को तत्काल मथकर उसी समय तक्र सेवन करना

2. ताजे दही से निर्मित तक्र सेवन अर्थात रात में जमाए दही का सेवन प्रातःकाल व प्रातः काल जमाए दही का सेवन सायकाल कर लेना।

Copyright © 2020 Authors

चू कि वातशमन में तक्र के हेतु होने में तक्र का अम्ल व मधुर रस कारण बताया गया है। यहां तक्र का अम्ल रस शिवदास सेन के अनुसार अनुरस है न कि प्रधान रस इसी कारण से तक्र पित्त का प्रकोप नहीं करता है।

इन्हीं गुणों के कारण आचार्य चरक ने अर्श व उदर रोगों में जिन- जिन तक्र प्रयोगों का वर्णन किया है। उन सभी का ग्रहणी दोष चि0 मे उपयोग करने का निर्देश किया है।

च0 चि 14 में-चरक ने तक्र के बारे में कहा गया है कि-

स्रोतःसु तक्रशुद्धेषु रसः सम्यगुपैति यः।

तेन पुष्टिर्बलं वर्णः प्रहर्षच्योपजायते।।

वातश्लेष्म विकाराणां शतं चापि निवर्तते।

नास्ति तक्रात् परं किंचिदौषधं कफवातजे।। (च0चि0 014/87-88)

आचार्य चरक ने तक्र को स्रोतोशोधक, धातुवृद्धिकर, पुष्टि, बल, वर्ण, हर्ष उत्पादक, व वात श्लैष्मिक विकार नाशक बताया है।

आचार्य सुश्रुत ने सु0सू0 45 द्रवद्रव्यविधिमध्याय में तक्र के गुण्कर्मा े का वर्णन करते हुए कहा है कि-

तक्र मधुरमम्लं कषायानुरसमुष्णवीर्यं लघु रूक्षमग्निदीपनं गरशोफातिसार ग्रहणीपाण्डुरोगार्श प्लीहगुल्मारोचकविषम् ज्वरतृष्णाच्छर्दिप्रसेकशू लमेदः श्लेष्मा निलहरं मधुरविपाकंहृद्यं मू त्रकृच्छस्नेहव्यापत्प्रशमनमवृष्यञ्च।

-(सु0सू0 45/54)

आचार्य वाग्भटानुसार-

तक्र लघु कषायाम्लं दीपनं कफवातजित् शोफोदरार्शोग्रहणीदोष मू त्रग्रहारूचीः।

प्लीह गुल्मघृतव्यापदगरपाण्ड् वामयान् जयेत्।(अ00सू0 5/34)

अष्टाप्र संग्रह सुत्र 6ध्69 में भी अष्टाप्र ŭदय के समान तक्र के गुणधर्म का वर्णन किया गया है।

 Copyright ⓒ 2020 Authors

च0सू0 27 अन्नपानविधिमध्याय-गोरस वर्ग

शोफार्शाग्रहणीदोषमू त्रग्रहोदरारूचै।

सन्हव्यापदि पाण्डुत्वे तक्रे दद्याप्रेरेषु।। (च0 सू0 27/229)

इस प्रकार विभिन्न दोषो पर तक्र के प्रभाव का बताते हुए कारण रूप में तक्र में ततत् रसगुण की उपस्थिति का उल्लेख पू र्वाेक्त प्रकार से तन्त्र ्कारो ने किया है।

अष्टाप्रदय टीकाकार अरूणदत्त के अनुसार जिस भी द्रव्य में ये रस गण् वीर्य, विपाक कर्म होगें, वह ग्रहणी रोग पीड़ित व्यक्ति के लिए पथ्य होगा।

अरूणदत्त के अनुसार तक्र में स्थित मधुर, अम्ल रूक्ष, कषाय आदि गुण परस्पर विरूद्ध होते हुए भी एक दू सरे कर्माे का नाश नहीं करते किन्तु अपने प्रभाव से कफ व वात का शमन करते हैं जिस प्रकार सत्व, रज व तम गुण परस्पर विरूद्ध होते हुए भी एक दू सरे का विनाश न करते हुए अपना स्वाभाविक कर्म करते है।

तक्र-भेद

रूक्षमर्धोद्घृतस्नेहं यतश्चानुदधृतं घृतम्।।

तक्रं दोषाग्नि बलवित्त्रिविधं तत् प्रयोजयेत्। (च0चि0 14/84-85)

आचार्य चरक ने तक्र के तीन भेदों का उल्लेख किया है-

1. रूक्ष तक्र-अर्थात जिसमें से स्नेह सम्पू र्ण निकाल दिया गया हो
2. अर्धाेद्धृत स्नेह तक्र-जिसमेें से स्नेह आधा निकला दिया गया हो
3. अनुद्रधृतस्नेह-अर्थात जिसमें से स्नेह बिल्कुल नहीं निकाला गया हो

विभिन्न रोगों में दोष, अग्नि, व बल कीमात्रा को देखते हुए तक्र के तीनो प्रकारों का प्रयोग करना चाहिए।

Copyright ⓒ 2020 Authors

रूक्ष तक्र प्रयोग - कफज विकारो, मन्दाग्नि व अल्प शारीरिक बल कीस्थिति में अर्धाद्धृत तक्र प्रयोग - पित्तज विकार, मध्यम अग्नि, व मध्यम बल कीस्थिति में अनुद्रधृत तक्र प्रयोग -वातज विकार, तीक्ष्णग्नि व उत्तम शरीर बल कीस्थिति में आचार्य सुश्रुत ने तक्र का वर्णन करते हुए तक्र के दो भेद बताए है।

मन्थनादिपृथग्भू तस्नेहमद्र्धद्केकं च यत्।

नाति सान्द्रद्रवे तक्रं स्वाद्वम्ले तुवरं रसं।।

यत्तु सस्नेहमजलं मथितं घोलमुच्यते। (सु0सू0 45/54

अर्थात दही का मन्थन करके जिसमें से स्नेह पृथक कर लिया हो व दही से अर्ध मात्रा में उदक मिलाया गया हो, जो न अधिक सान्द्र ना अधिक इव हो तथा रस में मधुर अम्ल कषाय हो उसे तक्र कहते है।

परन्तु जिस दही में ना तो जल मिलाया हो, ना ही स्नेह पृथक किया गया हो कवेल मथनी से मंथन किया गया हो उसे धोल कहते है।

ग्रहणीचिकित्साधिकार में तक्र के चार भेदो का वर्णन किया गया है

1.घोल, 2.मथित 3. उदश्वित् 4. तक्र-ये चार भेद दही में स्नेह व उदक कीमात्रा के आधार पर किये गये है।

तक्र में स्नेह कीउपस्थिति व जल कीन्यू न मात्रा होने से वह गुरूता युक्त होती है व उसके गुुणकर्म न्यू न होते हंै। जिस तक्र को जल न मिलाकर मस्तु सहित केवल मथ लिया जाय उसे मथित कहते है।

घोल व मथित के गुणों के बारे में अ0स0सू0 7/226 में कहा गया है-

दण्डाभिमथनाद्रदध्नों गुरूणाश्चातिशोफदात्।

अनुद्धृतस्नेहयपि तक्रं शोफहरं लघु।

अर्थात दही गुरू व शोफकर होता है परन्तु मथनी से मथने पर बिना स्नेंह निकाले भी लघु व शोफहर हो जाता है।

 Copyright ⓒ 2020 Authors

यह गुणों में यह परिवर्तन अष्टआहारविधि विशेषायतन मंेें करण अर्थात संस्कार के कारण दृष्टिगोचर होता है।

चक्रपाणि ने टीका में बाताया है-

मन्थनाद् गुणाधानं यथा शोथकृद्धधि शोथघ्नं सस्नेहमपि मन्थनात्।

(च0वि0 1/12)

भाव0 म0खण्ड-4 ग्रहणी चि0

घोलं तु मथितं तक्र मुदश्विच्छ्वच्छिवकाऽपि च।

ससरं निर्जलं घोलं मथितं त्वसरोदकम्।।

तक्रं पादजलं प्रोक्तमुदश्वित्वर्द्धवारिकम्।।

ध्वच्छिवका सारहीना स्यात्स्वच्छवा प्रचुरवारिका।।

घोल तु शर्करायुक्तं गुर्णेज्ञेयं रसालवत् ।।2।।

भावप्रकाश ने तक्र के 5 भेद का वर्णन किया है।

1. घोल-बिना जल मिलाए हुए मलाई सहित दही को मथने पर घोल का निर्माण होता है यह वात, पित्तनाशक व आह्लादजनक है।
2. मथित- दही कीमलाई को अलग कर बिना जल मिलाये दही को मथने पर दही कीमथित संज्ञा होती है। यह कफपित्तनाशक है।
3. तक्र-दही में चतुर्थांश जल मिलाकर मथने पर तक्र प्राप्त होता है तक्र ग्राही, कषाय, अम्ल, मधुर, विपाक लघु, उष्णवीर्य अग्निदीपक, वीर्यवर्धक, तृप्तिकारक व वातनाशक है।
4. उदश्वित-दही में 1/2 जल मिलाकर मथने पर उसे उदश्वित कहते है कफकारक, बलवर्धक, व अत्यन्त आमनाशक है।

  Copyright ⓒ 2020 Authors

5. ध्वच्छिवका-जिस दही को मथ कर मक्खन निकाल लिया हो पुनः उसी में अधिक जल डालकर फिर मथकर छवाछव प्राप्त होती है शीतल, लघु,पित्त, श्रम व तृषानाशक वातनाशक कफकारक होती हैं।

तक्र प्रयोग प्रशस्त:

शीतकालं ऽग्निमान्धे च कफोत्थेष्वमायेषु च।

मार्गावरोधे दुष्टे च वायौ तक्रे प्रशस्यते।। सु0सु0 45/87

अर्थात शीतकाल, अग्निमांध, कफजविकारो में, स्रोतावरोध कीस्थिति में व वायु कीदुष्टि में तक्र प्रयोग का निर्देश किया गया है।

वातेऽम्ले सैन्धवोयेंत, स्वादु पित्ते सशर्करम्।

पिबेत्तक्रं कफे चापि व्योषक्षारसमन्वितम्। सु0सु0 45/89

अर्थात वात विकारो, पित्तविकार व कफज विकारो में तक में क्रमशः सैधव, शर्करा, व त्रिकटु एवं यवक्षार मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।

तक्र निषेध-

नैवे तक्रं क्षेते दद्यान्नोष्णकाले न दुर्बलं।

न मू च्छ्वाभ्रमदाहेषु न रोगे रक्तपैत्तिके।। सु0सु0 45/86

अर्थात-क्षत, कीस्थिति में , ग्रीष्म या उदय काल में, दुर्बलव्यक्ति में मू च्छा भ्रम व दाह कीस्थिति में रक्त पैत्तिक व्याधियों में तक्र प्रयोग का निषेध है।

तक्र का प्रयोग काल:

सप्ताहं वा दशाहं वा पक्षं मासमथापि वा।

बलकालविशेषज्ञो भिषक् तक्रे प्रयोजयेत्।। च0चि0 14/77

 Copyright ⓒ 2020 Authors

रोगी, रोग, दोष के बल, व ऋतु, वय, अहोरात्रि आदि काल को ध्यान में रखते हुए रोगी की 1 सप्ताह, 10 दिन, 15 दिन या मास तक तक्र का प्रयोग कराना चाहिए। औषधि के साथ तक्र का उपर्युक्त काल तक प्रयोग करने से रोग का नाश हो जाता है।

पक्व व अपक्व तक्र के गुण कर्म:

आमं ग्राहितरं तकं.... अ0स0सू0 7/224

आम तक्र अर्थात जिसे अग्नि पर पक्व न किया हो, अधिक संग्राही होती है जबकि पक्व तक कम संग्राही होती है।

तकमामे कफे कोष्ठे हन्ति कण्ठे करोति च।

पीनसश्वासकासादौ पक्वमेव प्रयुज्येत्। भावप्रकाश

आम तक्र कोष्ठ में कफ का नाश करता है परन्तु कण्ठ अर्थात प्राण वह स्रोतस में कफ कीवृद्धि करता है। प्राणवह स्रोतो कीव्याधियों जैसे पीनस श्वास , कास आदि कीउत्पत्ति करता है या यदि ये व्याधियां अस्तित्व में हो तो उनकीवृद्धि करता है अतः इन व्याधियों में पक्व तक्र का ही प्रयाग करना चाहिए।

पक्व तक्र से तात्पर्य, तक्र को अग्नि पर पका कर उसमें मरिच, जीरा तैल आदि का प्रक्षेप देने से है।

ग्रहणी चि0 में तक्र के विविध प्रयोग

च0चि0 15/120-121-तत्रारिष्टः

15/145-कफज ग्रहणी में भोजन के पश्चात् अम्ल तक्र का पान व तक्रारिष्ट का प्रयोग

सु0उ0 40/180

तक्रेण वाऽथ तक्रं वा केवलं हितमुच्यते।

अर्थात ग्रहणी में केवल तक्र का प्रयोग या अनेक गणौषधियों के साथ तक्र प्रयोग हितकर है।

चक्र0 ग्रहणी चि0-पाचनी पेया
कपित्थबिल्वचांप्रेरीतकदाडिमसाधिता।
पाचनी ग्राहिणी पेया सवाते पांचभू तिकी।3

Copyright © 2020 Authors

श्रीफलादिकल्क-

बिल्वकल्क, सोंठचू र्ण दोनो के बराबर गुड़ मिलाकरतक्र के साथ सेवन अति उग्र ग्रहणी रोग को नाश करता है।

तक्रवटी भैषज्यरत्नावली (शोथ रोगाधिकार)

तक सेवनके विषय

शीतकालेऽिग्नमांद्ये च तथा वातामयेषु च।

अरूचौं स्त्रोतसोरोधे तके स्यादमृतोपम्।। 14

तत् हन्ति गरच्छ्वर्दिप्रसेकविषमज्वरान्।

पाण्डुमेदोग्रहण्यर्शाेमू त्रग्रहभगन्दरान्।। 15

मेहे गुल्ममतीसारे शू ल प्लीहोदरारूचोंः।

श्वित्रकोष्ठगतव्याधीन् कुष्ठशोथ तृषाकृमीन्।।16।।भा0नि0तक वर्ग

समुदघृते तक्रं पथ्येलघु विशेषतः।

स्त्रोतोकोद्धृताघृतं तस्माद गुरू वृष्यं कफावहम्।

अनुदधृतघृतं सान्द्रं गुरू पुष्टिबलप्रदम्।। 39

उदधृतस्नेहस्य स्तोकोदघृतस्नेहस्यानुदघृतस्नेस्य च तक्रस्य

गुणाः समुदघृतेति।। 39

सम्पू र्ण घी निकाले तक्र के गुणपथ्य व लघु

अल्पमात्रा में घी निकाले तक्र के गुण-गुरू, शुक्रवर्द्धक, वृष्य व कफजनक के गुण अनउदघृत घृत वाला तक्र के गुण-सान्द्र (गाढ़ा) गुरू, पुष्टि व बलकारक होता है।

Copyright © 2020 Authors

सन्दर्भ:

1 चरक संहिता (अग्निवेश),हिंदी विधोतनी,टिका पं सत्यनारायण शास्त्री द्वारा , चौखम्भा भारती अकादमी वाराणसी 1998

2 चरक संहिता (अग्निवेश प्रणीता) आयुर्वेद दीपिका ,टिका चक्रपाणि दत चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी 2005

3. सुश्रत संहिता ,आयुर्वेद तत्व संदीपिका हिंदी टीका कविराज अम्बिकादत्त शास्त्री ,चौखम्भा संस्कृत संस्थान वाराणसी 1997

4.अष्टाङ्ग ह्रदय (वाग्भट्ट कृत) विधोतनी टीका अग्निदेव गुप्त द्वारा ,चौखम्भा सुरभारती सीरीज वाराणसी 2003

5.अष्टाङ्ग संग्रह (वाग्भट्ट कृत) सरोज हिंदी व्याख्या रविदत्त त्रिपाठी द्वारा ,चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन दिल्ली 1996

6. योगरत्नाकर हिंदी व्याख्या,इंद्रदेव त्रिपाठी कृष्णदास अकादमी वाराणसी 22005

7. शारङ्गधर संहिता (हिंदी व्याख्या ,शैलजा श्रीवास्तव कृष्णदास अकादमी वाराणसी 1998

8. भावप्रकाश (भावकिज रचित हिंदी

व्याख्या ब्रह्म शंकर मिश्र 2000 चौखम्भा भरती अकादमी वाराणसी ,

9.गदनिग्रह (वैध शोडल कृत विधोतनी हिंदी व्याख्या इंद्रदेव त्रिपाठी एवं गंगा सहाय पांडेय चौखम्भा संस्कृत सीरिज वाराणसी 1968

 Copyright © 2020 Authors

10. भैषज्य रत्नावली (गोविंद दास सेन द्वारा रचित) हिंदी व्याख्या पंडित चौखम्भा भरती अकादमी वाराणसी 2003

11. भावप्रकाश निघण्टु(भाव मिश्र द्वारा रचित)हिंदी टीका गंगा सहाय पांडेय चौखम्भा भरती अकादमी वाराणसी

 Copyright ⓒ 2020 Authors